Volume: 2 Issue: 10 Pages: 53-57

शिक्षा का प्रमुख कारक भाषाः पं0 जवाहरलाल नेहरू एक दृष्टिकोण

*[1]डॉ. नवनीत कुमार सिंह

*[1]विभागाध्यक्ष (बी.एड.), शिक्षा विभाग, चन्द्रावती तिवारी कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, काषीपुर, उधम सिंह नगर, उत्तराखण्ड, भारत।

Article Info.
E-ISSN: 2583-6528
Impact Factor (SJIF): 5.231
Peer Reviewed Journal
Available online:
www.alladvancejournal.com

Received: 23/Sep/2023
Accepted: 26/Oct/2023

***Corresponding Author**
डॉ. नवनीत कुमार सिंह
विभागाध्यक्ष (बी.एड.), शिक्षा विभाग, चन्द्रावती तिवारी कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, काषीपुर, उधम सिंह नगर, उत्तराखण्ड, भारत।

सारांश
बीसवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में अनेक ऐसे लोग राजनीति के क्षेत्र में आये, जो मात्र राजनीतिज्ञ ही नहीं थे वरन् भाषा के धनी तथा साहित्य के गहन अध्येता ही थे। उस काल के विभिन्न विचारक इस परम्परा के प्रखर प्रतीक थे। उन्होंने अंग्रेजी के प्रभाव को कम करने हेतु मातृभाषा में शिक्षा देने की वकालत की। परन्तु लाला लाजपतराय व पं0 जवाहरलाल नेहरू ने मातृभाषा के साथ अंग्रेजी भाषा की भी वकालत की। लाला लाजपतराय जी का विचार था कि, ''यूरोपीय भाषाओं, साहित्य एवं विद्वानों के अध्ययन को भारत में प्रोत्साहन न देना मूर्खता व पागलपन होगा। अभी उनका यथेष्ट ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ है। लाला लाजपत राय ने अपनी पुस्तक 'द प्राब्लम ऑफ नेशनल एजूकेशनल इन इण्डिया' में शिक्षा में माध्यम के प्रश्न पर गम्भीरता से विचार किया। उनके अनुसार जनता की शिक्षा जनता की भाषा में हो। महात्मा गाँधी के कथनानुसार, "जवाहरलाल मेरा उत्तराधिकारी होगा। उसका कहना है कि वो मेरी जबान नहीं समझता और वह एक ऐसी भाषा बोलता है, जो मेरे लिए विदेशी है। यह बात ठीक भी हो सकती है, लेकिन दो दिलों के मिलाप में भाषा बाधा नहीं बन सकती। मैं इतना जानता हूँ कि मैं नहीं रहूँगा, तो वह मेरी भाषा बोलेगा।" स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री का गौरव हासिल करने वाले पं0 नेहरू ने भाषा को परिभाषित करते हुए लोकसभा में कहाः ''भाषा जनता के विचारों के आदान–प्रदान का माध्यम है। विचार, विश्व में सबसे महत्वपूर्ण वस्तु है, क्योंकि प्रत्येक वस्तु विचारों का परिणाम है। परन्तु विचारों को शक्तिशाली शब्दों का रूप लेना चाहिए। अधिकांश महत्वपूर्ण विचार प्रभावपूर्ण शब्दों में व्यक्त किये जाते हैं।'' हिन्दी के महत्व को स्वीकार करते हुए पं0 जवाहरलाल नेहरू भारत में औद्योगीकरण तथा तकनीकी विकास हेतु अंग्रेजी भाषा के समर्थक थे। उन्होंने अपने वक्तव्य में कहा– ''आधुनिक समय में अंग्रेजी अधिक व्यापक व विश्व की महत्वपूर्ण भाषा है तथा विश्व की लगभग दो तिहाई वैज्ञानिक व तकनीकी पुस्तकें अंग्रेजी माध्मय में है।'' पं0 नेहरू हिन्दी के विरोधी नहीं थे और न ही अंग्रेजी के पक्षधर थे। किन्तु वे हिन्दी अतिवादियों के विरूद्ध जनता को सचेत करना चाहते थे, जो एकता के नाम पर हिन्दी का नारा बुलन्द करके दक्षिण के उन क्षेत्रों में हिन्दी को लादना चाहते थे जो उनके विरोधी थे। उनका सुझाव था कि भारत में प्रत्येक छात्र को स्थानीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय भाषा की जानकारी मिलनी चाहिए, इसलिए उन्होंने त्रिभाषा–सूत्र का समर्थन किया।

मुख्य शब्दः पं. जवाहरलाल नहेरू, भाषा, माध्यम।

प्रस्तावना
मानवता के इतिहास में भाषा सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। यह मानवीय सम्पर्क तथा भाव सम्प्रेषण का सर्वोत्तम माध्यम भी है। भाषा की उत्पत्ति की जो भी परिस्थितियाँ और कारण रहे हों किन्तु इतना तो निश्चित है कि भौगोलिक दूरी, जलवायु की बनावट, एक जाति का दूसरी जाति से सम्पर्क का अभाव आदि कारण ऐसे हैं जिनसे विश्व की भाषाओं की ध्वनि व्यवस्था, रूप–रचना और वाक्य–रचना में अन्तर उत्पन्न हो गया है। सम्पर्क का यह माध्यम निर्बाध रूप से सम्पूर्ण मानवता को एक

दूसरे के संसर्ग में नहीं ला सकता। क्योंकि संसार में बोलियों तथा उप–बोलियों को छोड़कर करीब तीन हजार भाषाएँ मौजूद हैं।

एक भाषा सीखकर विश्व की अन्य भाषाओं को समझना असम्भव है। विज्ञान के प्रचार–प्रसार के साथ ही विश्व एक व्यापक परिवार के रूप में अवधारणात्मक स्तर पर सिकुड़ता जा रहा है, ऐसी स्थिति में यह आवश्यक हो गया है कि भाषा की विभाजक दीवार को भेदा जाय। भाषिक संसर्ग के बिना मानवता का वास्तविक सामीप्य स्थापित हो भी नहीं सकता। विश्व की तमाम भाषाओं को किसी भी प्रबुद्ध व्यक्ति के लिए सीखना असम्भव है। अनुवाद के माध्यम से यह भाषिक अवरोध दूर किया जा रहा है। अनुवाद के माध्यमों को विकसित करने के लिए भाषा का भाषावैज्ञानिक विश्लेषण आवश्यक है। विश्व की प्रसिद्ध भाषाओं का अध्ययन तो किया जा चुका है किन्तु अमेरिका, अफ्रीका आदि महाद्वीपों के दुर्गम प्रदेशों तथा अनेक द्वीपों की भाषाएँ अब भी चुनौती के रूप में हमारे समक्ष हैं। मानक एवं परिनिष्ठित भाषाओं के प्रति विशेष लगाव होने के कारण बोलचाल की बहुत सी भाषाएँ अपनी मूल प्रकृति को खोती जा रही हैं। उनके पूर्णतया नष्ट हो जाने का खतरा मौजूद है। जिस प्रकार वन्य जीवों के संरक्षण की चिन्ता मानव समाज में की जा रही है उसी तरह जन बोलियों तथा भाषाओं के भी संरक्षण की चिन्ता होनी चाहिए। भाषा केवल विचारों एवं भावों के आदान–प्रदान का माध्यम ही नहीं होती बल्कि विशिष्ट संस्कृति की संवाहिका भी होती है। किसी भाषा के लुप्त होने का मतलब है मानवीय संस्कृति के किसी एक अंग का लोप होना। [1] भाषा और संस्कृति के सम्बन्ध में बंकिम चन्द्र चटर्जी ने सन् 1946 में कहा था, "विभिन्नता रहते हुए समस्त भारत की जड़े अखण्ड हैं। भाषा और संस्कृति के क्षेत्र में इस सत्य का प्रतीक हिन्दी है। "संगच्छध्वं संवदध्वं" आधुनिक भारत के जीवन में इस मन्त्र को सार्थक करने का साधन हिन्दी ही है।" [2] इसलिए आज हमें हिन्दी को पूर्णरूप से भाषा का माध्यम बनाने के प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करना चाहिए। वास्तव में हिन्दी ही राष्ट्रीय भाषा के पद पर आसीन होने योग्य है।

नीति–घोषणा पत्र में हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के प्रश्न पर कहा गयाः ''भारतीय जनता की प्रगति और सांस्कृतिक एकता को बढ़ावा देने के लिए पार्टी 'हिन्दी' को भारत की सामान्य राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्वीकार करेगी, परन्तु वह इस बात को भी अपना कर्त्तव्य समझेगी कि सभी क्षेत्रीय भाषाओं को समान रूप से बढ़ावा दिया जाये। ऐसे प्रान्तों में भी जहाँ सम्बन्धित क्षेत्रीय भाषा काम–काज की भाषा नहीं है, वहाँ भी उसके समुचित अध्ययन को बढ़ावा देने के लिए कदम उठाये जायेंगे।'' [3]

स्वतन्त्रता पूर्व भाषा के माध्यम पर विचारः बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में अनेक ऐसे लोग राजनीति के क्षेत्र में आये, जो मात्र राजनीतिज्ञ ही नहीं थे वरन् भाषा के धनी तथा साहित्य के गहन अध्येता ही थे। उस काल के विभिन्न विचारक इस परम्परा के प्रखर प्रतीक थे। उन्होंने अंग्रेजी के प्रभाव को कम करने हेतु मातृभाषा में शिक्षा देने की वकालत की। परन्तु लाला लाजपतराय व पं0 जवाहरलाल नेहरू ने मातृभाषा के साथ अंग्रेजी भाषा की भी वकालत की। इस सम्बन्ध में लाला जी का विचार था कि, ''यूरोपीय भाषाओं, साहित्य एवं विद्वानों के अध्ययन को भारत में प्रोत्साहन न देना मूर्खता व पागलपन होगा। अभी उनका यथेष्ट ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ है।'' [4] विचारकों का मुख्य उद्देश्य शिक्षा में राष्ट्रीय भावना को पुष्ट करना था। अतः उन्होंने राष्ट्रीय शिक्षा आन्दोलन को स्वतन्त्रता आन्दोलन का अंग बनाया। वे चाहते थे कि राष्ट्रीय शिक्षा आन्दोलन द्वारा पाठ्यक्रम में स्वदेशी भाषाओं और स्वदेशी संदर्भों को स्थान दिया जाये तथा लोकतन्त्र को राष्ट्रीयता का पूरक मानकर उसका स्वागत किया जाये। विद्या तथा ज्ञान में यूरोपीय संदर्भों को मर्यादित एवं सीमित किया जाये। उस काल में सरस्वती, मर्यादा, प्रताप आदि प्रमुख साहित्यिक पत्र–पत्रिकाएं थीं, जिन्हें समाजवादी बड़े चाव से पढ़ते थे तथा लेख लिखते थे।

आचार्य नरेन्द्रदेव का ''हमारा हिन्दी के प्रति कर्त्तव्य'' लेख मर्यादा पत्रिका में सन् 1913 के नवम्बर माह के अंक में प्रकाशित हुआ। इस लेख में उन्होंने अत्यन्त सन्तप्त हृदय से हिन्दी साहित्य की कमजोरियों पर हिन्दी प्रेमियों का ध्यान आकर्षित करते हुए लिखा कि हिन्दी भाषा तभी देशव्यापी हो सकती है जब हिन्दी भाषा–भाषी अपनी भाषा के प्रति अपना कर्त्तव्य ध्यान में रखकर हिन्दी साहित्य के भण्डार को दूसरी भाषाओं के समान समृद्ध बनायें। उनके अनुसार मिथ्याभिमान से कार्य नहीं चलेगा। ''अन्य भाषा–भाषी हमारी भाषा तब तक स्वीकार नहीं करेंगे, जब तक हमारा साहित्य उनकी भाषा के साहित्य से बढ़ा–चढ़ा न हो।'' [5] स्कूली छात्र के रूप में जयप्रकाश नारायण का लेख ''बिहार में हिन्दी की स्थिति'' आभास कराता है कि उनमें हिन्दी भाषा और साहित्य के प्रति विशेष अभिरूचि प्रारम्भ से ही थी। [6]

प्रथम समाजवादी के रूप में विख्यात पंजाब केसरी लाला लाजपत राय ने अपनी पुस्तक द प्राब्लम ऑफ नेशनल एजूकेशनल इन इण्डिया में शिक्षा में माध्यम के प्रश्न पर गम्भीरता से विचार किया। उनके अनुसार जनता की शिक्षा जनता की भाषा में हो। उन्होंने उच्च शिक्षा में माध्यम के रूप में संस्कृत का विरोध किया। उनके अनुसार अब संस्कृत मृत भाषा है और उसका भारत में तिलांजलि उसी प्रकार होनी चाहिए जैसे यूरोप में ग्रीक और लैटिन के साथ हुआ। उन्होंने लिखाः ''यदि भारत चाहता है कि उसके बच्चे समय और योग्यता का प्रयोग जीवन की व्यावहारिक समस्याओं के समाधान में लगायें, तो उसे संस्कृत भाषा को छोड़ना होगा।'' उन्होंने राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दुस्तानी की वकालत की। उनके अनुसार क्षेत्रीय भाषायें तथा हिन्दुस्तानी साथ–साथ रहे, प्रथम क्षेत्रीय हितों हेतु तथा द्वितीय राष्ट्रीय हितों हेतु। लाला लाजपत राय स्कूल तथा कॉलेज में अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाये जाने के विरोधी थे परन्तु

परिवर्तित संसार में उन्होंने अंग्रेजी को एक अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाये जाने का समर्थन किया। उनके अनुसार कोई भी राष्ट्र, चाहते हुए भी, अन्य राष्ट्रों से पृथक नहीं रह सकता। [7] उनका सुझाव था कि शिक्षा के हित में भाषाओं की विभिन्न लिपियों को सीमित किया जाये। [8]

28 सितम्बर, 1937 ई0 को संयुक्त प्रान्त की विधानसभा में आचार्य नरेन्द्रदेव ने नियम 19 के अन्तर्गत कहा कि ''जो मेम्बरान अंग्रेजी जबान नहीं जानते, उन्हें कार्यवाही में अपनी मादरी जबान बोलने का अख्तियार दिया जाये।'' उन्होंने कहाः ''जबकि प्रोविजन मौजूद है माननीय स्पीकर साहब का फर्ज है कि इस इजलास की कार्यवाही जहाँ तक मुमकिन हो हिन्दुस्तानी जबान में करावें। जो लोग अंग्रेजी से वाकिफ़ नहीं हैं वह किस तरह से इसमें हिस्सा ले सकते है...। हर एक शख्य जिसकी मादरी जबान हिन्दुस्तानी है वह बमुकाबिले अंग्रेजी के मादरी जबान में ज्यादा आसानी से बोल सकते है।'' [9]

जगदीश चन्द्र दीक्षित ने लिखा है कि इन्दौर में डॉ0 सम्पूर्णानन्द जी के अध्यापन काल की सर्वप्रमुख घटना सन् 1917 ई0 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के आठवें अधिवेशन का आयोजन था जिसका सभापतित्व गाँधी जी ने किया। इस सम्मेलन में वह हिन्दी के प्रबल समर्थक पुरूषोत्तम दास टण्डन के निकट सम्पर्क में आये तथा ''हिन्दी के आन्दोलन तथा पत्रकारिता से निकट सम्बद्ध हो गये। लगभग तीन वर्ष तक वह इस कॉलेज की सेवा में रहे और हिन्दी–प्रेम तथा राष्ट्रीयता की भावना का स्फूरण इसी काल में उनके हृदय में हुआ।'' काशी विद्यापीठ में उनको मर्यादा नामक प्रसिद्ध पत्रिका का सम्पादक बनाया गया। ''यद्यपि यह राजनीति–प्रधान पत्रिका थी किन्तु साहित्य तथा अन्य विषयों पर भी शीर्षस्थ विद्वानों के लेख इसमें प्रकाशित होते थे।'' [10] संयुक्त प्रान्त के शिक्षामंत्री के रूप में माध्यमिक शिक्षा सम्मेलन में डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने कहाः ''हमारी शिक्षा का माध्यम विदेशी भाषा होने का परिणाम यह हुआ कि साधारण बालक–बालिकाओं की बुद्धि कुंठित हो गई और उन्हें ऐसी बौद्धिक कलाबाजी लगाने के लिए विवश होना पड़ता है जिसका आनुपातिक परिणाम नहीं निकलता।'' [11] डॉ0 राममनोहर लोहिया हिन्दी व हिन्दुस्तानी भाषा के पूर्ण समर्थ थे।

स्वतन्त्रतोपरान्त भाषा के माध्यम पर विचारः सभी विचारक भाषा के प्रश्न पर विवाद को अभिशाप मानते थे। वे चाहते थे कि भाषा के नाम पर क्षेत्रीय भावनाओं को उकसाया न जाये तथा भाषा समस्या के समाधान में देशहित को प्राथमिकता दी जाये। वे भाषा के प्रति निष्ठा का आदर करते थे, पर इस निष्ठा को देश प्रेम से ऊँचा या उसके समक्ष स्थान देने के विरूद्ध थे। वे चाहते थे कि विभिन्न भाषा–भाषी समूहों में सौहार्दपूर्ण भावना जागृत की जाये। सन् 1947 को देश स्वतन्त्र होने के उपरान्त देश में शिक्षा का बड़ी तेजी से विस्तार प्रारम्भ हुआ, परन्तु शिक्षा का माध्यम विभिन्न चरणों में क्या हो यह विवादित विषय बन गया। स्वतन्त्र भारत में सर्वप्रथम सन् 1948 में डॉ0 ताराचन्द्र समिति ने उच्च शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रादेशिक भाषाओं को अपनाने पर बल दिया था। सन् 1948–49 में राधाकृष्णन आयोग की नियुक्ति हुई, इसमें विश्वविद्यालय स्तर पर क्षेत्रीय भाषाओं को माध्यम बनाने का सुझाव दिया। सन् 1949 में चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने भारतीय संविधान सभा में राष्ट्रभाषा (नेशनल लैंग्वेज) और राजभाषा (स्टेट लैंग्वेज) शब्द का प्रयोग राष्ट्रभाषा और राजभाषा के अंतर को करने के लिए किया था। [12] सन् 1952–53 में मुदालियर आयोग एवं आचार्य नरेन्द्रदेव समिति–द्वितीय द्वारा माध्यमिक स्तर पर शिक्षा का माध्यम मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा बनाने का तथा निम्न माध्यमिक स्तर पर दो भाषाओं को सिखाने का सुझाव दिया। सन् 1956 में भाषा आयोग ने भी शिक्षा के माध्यम एवं प्रशासनिक कार्यों में भारतीय भाषाओं को अपनाने का सुझाव दिया। इसी वर्ष केन्दीय शिक्षा सलाहकार मण्डल ने अपनी 23वीं बैठक में त्रिभाषा सूत्र लागू करने का निर्णय किया। सन् 1964–66 में कोठारी आयोग ने त्रिभाषा सूत्र को संशोधित कर क्रियान्वित किया, इसके अन्तर्गत प्राथमिक स्तर पर केवल एक भाषा पढ़नी होगी–मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा, संघ की राजभाषा या सहचारी राजभाषा। माध्यमिक स्तर पर केवल दो भाषाएँ अनिवार्य की गयी और विद्यार्थियों को यह छूट दी गयी कि वे पहले पढ़ी हुई तीन भाषाओं में किन्हीं दो को चुने। आयोग ने कहा कि त्रिभाषा सूत्र को विश्वविद्यालय स्तर पर भी लागू करना चाहिये, परन्तु विद्यार्थियों पर भाषा का भारी बोझ पड़ेगा, इसलिये आयोग ने कहा कि विश्वविद्यालय स्तर पर किसी भी भाषा का अध्ययन अनिवार्य नहीं होना चाहिये। 26 जनवरी 1965 को भारतीय संविधान द्वारा हिन्दी भाषा के साथ अंगेजी एवं अन्य 21 भाषाओं को भारतीय राजकीय भाषा के रूप में मान्यता प्रदान की गई। [13] सम्पूर्ण विश्व में बोली जाने वाली भाषाओं में हिन्दी भाषा का द्वितीय स्थान है।

भाषा के माध्यम पर पं0 जवाहरलाल नेहरू के विचारः स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री का गौरव हासिल करने वाले समाजवादी चिन्तक पं0 जवाहरलाल नेहरू ने भाषा को परिभाषित करते हुए लोकसभा में कहाः ''भाषा जनता के विचारों के आदान–प्रदान का माध्यम है।'' [14] विचारों के सम्बन्ध में नेहरू का कथन थाः ''विचार, विश्व में सबसे महत्वपूर्ण वस्तु है, क्योंकि प्रत्येक वस्तु विचारों का परिणाम है। परन्तु विचारों को शक्तिशाली शब्दों का रूप लेना चाहिए। अधिकांश महत्वपूर्ण विचार प्रभावपूर्ण शब्दों में व्यक्त किये जाते हैं।'' पं0 जवाहरलाल नेहरू पर प्रायः यह आरोप लगाया जाता था कि वे हिन्दी विरोधी थे व अंग्रेजी के समर्थक थे। भाषा के प्रश्न पर अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए नेहरू ने एक वक्तव्य में कहाः ''मैंने शिक्षामन्त्रिओं के सम्मेलन में अपने उद्घाटन भाषण में हिन्दी के विरूद्ध एक शब्द नहीं कहा। वास्तव में मैं तो उसके पक्ष में बोला। मैं स्वीकार करता हूँ कि देश के उन भागों का छोड़कर जहाँ क्षेत्रीय भाषाओं का मुख्य रूप में प्रयोग होता है, हिन्दी हमारी शिक्षा व प्रशासन का माध्यम होगी।'' [15] भाषविक समस्या पर उन्होंने कहाः ''भारत की

कथित सैकड़ों भाषाओं का विषय हमारे आलोचकों के निकट एक प्रिय वस्तु है, पर वे इन भाषाओं में से एक का भी ज्ञान नहीं रखते। तथ्य यह है कि भारत भावी रूप से बहुत ही संयुक्त है और यह केवल लोकशिक्षा के अभाव का परिणाम है कि देश में विविध बोलियाँ प्रचलित हो गई हैं। कुल मिलाकार दस बड़ी भाषाएं हैं जो कुछ सीमित क्षेत्रों को छोड़कर, सारे देश पर हावी है। यह दो वर्गों में विभाजित है– भारत–आर्य तथा द्रविड़। इन दोनों के बीच (घड़ी के रूप में) संस्कृत ही सामान्य पृष्ठभूमि है।'' हिन्दी के समर्थन में नेहरू का कहना थाः ''हिन्दी का विचार दो तरह से किया जाना चाहिए, एक क्षेत्रीय भाषा के रूप में, जिसकी स्थिति बिल्कुल वही हैं, जो अन्य क्षेत्रीय भाषाओं की है, और उससे अधिक एक अखिल भारतीय भाषा के रूप में, सरकारी या किसी और अर्थ में। एक क्षेत्रीय भाषा के रूप में आप हिन्दी को वह समृद्धि प्रदान करना चाहते हैं, जो एक क्षेत्रीय भाषा की होनी चाहिए। यदि आप वैसी ही सम्पन्नता अखिल भारतीय भाषा पर थोपना चाहें, तो आप दूसरे लोगों के लिए बहुत कठिन बना देंगे। दक्षिण में एक व्यक्ति, जिसने अखिल भारतीय भाषा सीख ली है, बड़ी सहजता से उसकी अधिक गहन जानकारी उपलब्ध कर सकता है, लेकिन बात यह है कि उसे अपना सरकारी या दूसरा काम करने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए।'' [16]

हिन्दी के महत्व को स्वीकार करते हुए पं0 जवाहरलाल नेहरू भारत में औद्योगीकरण तथा तकनीकी विकास हेतु अंग्रेजी भाषा के समर्थक थे। 8 सितम्बर, 1956 ई0 को अपने वक्तव्य में उन्होंने कहा– ''आधुनिक समय में अंग्रेजी अधिक व्यापक व विश्व की महत्वपूर्ण भाषा है तथा विश्व की लगभग दो तिहाई वैज्ञानिक व तकनीकी पुस्तकें अंग्रेजी माध्मय में है।'' यह सम्भव है कि प्रारम्भिक वैज्ञानिक व तकनीकी प्रशिक्षण हिन्दी या किसी क्षेत्रीय भाषा में दिया जा सकता है, परन्तु हम तकनीकी व औद्योगिक युग के विस्तृत व पेचीदे विचारों को कुछ पुस्तकों या शब्दों के अनुवाद से पूरा नहीं कर सकते। आधुनिक समय में टैक्नोलॉजी में इतनी तीव्रता से परिवर्तन हो रहा है कि जो साहित्य आज प्रकाशित हो रहा है शीघ्र ही पुराना हो जाता है। प्रत्येक वैज्ञानिक को विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित वैज्ञानिक व तकनीकी पुस्तकों व पाक्षिकों को पढ़कर अपने ज्ञान को समयानुकूल बनाना चाहिए। पं0 जवाहरलाल नेहरू भारत में अंग्रेजी जानने वाले एक पृथक वर्ग विशेष के विरोधी थे। ''ब्रिटिश काल में शिक्षा का क्षेत्र सीमित करने के कारण यह सम्भव हो सका, परन्तु अब यह सम्भव नहीं है क्योंकि शिक्षा का क्षेत्र अधिक व्यापक हो चुका है।'' [17] पं0 नेहरू हिन्दी के विरोधी नहीं थे और न ही अंग्रेजी के पक्षधर थे। किन्तु वे हिन्दी अतिवादियों के विरूद्ध जनता को सचेत करना चाहते थे, जो एकता के नाम पर हिन्दी का नारा बुलन्द करके दक्षिण के उन क्षेत्रों में हिन्दी को लादना चाहते थे जो उनके विरोधी थे। उनका सुझाव था कि भारत में प्रत्येक छात्र को स्थानीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय भाषा की जानकारी मिलनी चाहिए, इसलिए उन्होंने त्रिभाषा–सूत्र का समर्थन किया। उनका मानना था कि भारत की बहुसंख्यक जनसंख्या को अपनी भाषा, अंग्रेजी के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं का भी ज्ञान होना चाहिए। इस प्रयास की सफलता पर भाषाओं के मध्य पाई जाने वाली खाई कम होगी तथा जनता एक दूसरे के निकट आयेगी।'' नेहरू जी ने त्रिभाषा–सूत्र के सम्बंध में निम्न बातों पर बल दियाः–

- वैज्ञानिक व तकनीकी उद्देश्य हेतु अंग्रेजी या अन्य विदेशी भाषा का ज्ञान होना आवश्यक है अन्यथा हम विश्व के चिन्तन से दूर हो जायेंगे।
- हिन्दी या अन्य क्षेत्रीय भाषा शिक्षा का माध्यम हो।
- अंग्रेजी द्वितीय या तृतीय भाषा के रूप में अनिवार्य हो। यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक व्यक्ति को अंग्रेजी का ज्ञान हो यद्यपि बहुत से व्यक्ति अंग्रेजी बोल नहीं सकते पर उनमें अंग्रेजी भाषा में पुस्तकें व पाक्षिक पढ़कर समझने की क्षमता हो।

24 अप्रैल, 1963 ई0 को लोकसभा में भाषा सम्बन्धी विधयेक पर बोलते हुए नेहरू ने कहा कि भाषा के प्रश्न पर हमें सावधानी से कदम उठाना चाहिए। ''भाषा के प्रश्न पर हमारा दृष्टिकोण उदारवादी होना चाहिए। जहाँ तक सम्भव हो हमें भाषा के प्रयोग के प्रश्न पर किसी को बाध्य नहीं करना चाहिए। जब कभी किसी भाषा को दबाने या जनता को दूसरी भाषा के प्रयोग के लिए बाध्य किया गया, उत्पात हुए हैं।'' [18] नेहरू जी की दृष्टि में भाषा सम्बन्धी विवाद हिन्दी बनाम अंग्रेजी या अंग्रेजी बनाम हिन्दी नहीं है। प्रत्येक का अपना उचित स्थान है। राष्ट्रीय भाषाओं में अंग्रेजी को सम्मिलित नहीं किया जा सकता। हम अंग्रेजी को दूसरे रूप में रख सकते हैं। विदेशी सम्पर्क तथा उच्च वैज्ञानिक व तकनीकी ज्ञान हेतु अंग्रेजी की उपयोगिता है। अंग्रेजी हमारी ''भावात्मक एकता'' की प्रतीक नहीं है। नेहरू जी संस्कृत को एक प्रकार से, भारत की मूल भाषा और उच्च सांस्कृतिक स्तर पर एकमात्र 'सामान्य भाषा' स्वीकारते थे। उन्होंने क्षोभ प्रकट किया कि हिन्दी–उर्दू विवाद ने 'साम्प्रदायिक रंग' पकड़ लिया। शिक्षा के माध्यम के रूप में भाषा के विवाद पर जवाहरलाल नेहरू ने कहा कि, ''हमें एक समृद्ध और विविध रूपात्मक भाषा की जरूरत है, जो अपने जीवित रहने के लिए और ताकत के लिए, पुरानी भाषाओं के साथ ही दुनिया की नयी भाषाओं से भी शब्दों का आयात करे। शब्द के आधुनिक विचारों की सूक्ष्म छविओं को अभिव्यक्त करने के लिए उन्हें विकसित होना पड़ेगा। इसलिए उनका भण्डार जितना ही भरता है, वे उतनी ही बेहतर होती हैं। अपने खुद के सीमित ज्ञान के चलते, हमें भाषाओं के विकास को रोकने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। हिन्दी और उर्दू दोनों में ही जिस असल चीज़ पर एतराज करना चाहिए, वह है अभिव्यक्ति, वह दरबारी और विस्तारशील प्रणाली–जो यद्यपि शब्दाडंबरपूर्ण होती है, लेकिन उसमें जीवनी शक्ति नहीं होती और वह जनसाधारण तक कभी नहीं पहुँच सकती। अगर हम जन–साधारण का ध्यान रखकर सोचें, बोलें और लिखें,

तो हमारी बातों में लिखित में सादगी और ताकत आ जाएगी। असंयत लेखन के साथ ही हिन्दी और उर्दू की अलगाव की प्रवृत्ति को रोकने का यही रास्ता है।'' [19]

पं0 जवाहरलाल नेहरू ने एक अन्य स्थान पर कहाः ''हिन्दी और दीगर हिन्दुस्तानी जबानों में कोई झगड़ा नहीं है। अपनी मातृभाषा सीखने और उसमें दक्षता प्राप्त करने को– हिन्दी के मुकाबले अन्य को नीचा दर्जा देने की जरूरत नहीं है। हिन्दुस्तान में हिन्दी सामान्य भाषा और अन्तर प्रान्तीय एवं राष्ट्रीय कामों के लिए जरूरी है। यह वह भाषा है, जो भारत को इकट्ठा करके रखेगी और राष्ट्र को एक बनाएगी। इस देश के दो तिहाई लोग अभी भी हिन्दी बोलते हैं और बाकी लोगों का कर्त्तव्य है कि वे इसे सीखें।'[20]

निष्कर्ष

अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि नेहरू जी भारत जैसे बहुभाषीय देश में खुले दिमाग से बहस के समर्थक थे। उन्होंने हमेशा ऐसे माध्यम का समर्थन किया जो एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति द्वारा कही हुई बातें एवं दिया हुआ ज्ञान आसानी से समझ में आ जाये, वह माध्यम चाहे हिन्दी हो या अंग्रेजी या अन्य कोई भारतीय भाषा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शर्मा, प्रो0 रामकिशारः हिन्दी भाषा का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्यः श्यामा प्रकाशन संस्थान, इलाहाबाद, 2013, पृ0 9
2. गौड़, डॉ0 आर0एन0ः राजहंस हिन्दी निबन्धः राजहंस प्रकाशन मन्दिर, मेरठ, 2004, पृ0 37
3. प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के गया अधिवेशन 1955 की नीति घोषणा पत्र 1 उद्धतः दीक्षित, जगदीश चन्द्रः आचार्य नरेन्द्रदेव–युग और विचारः सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ0 प्र0, 1989, पृ0 226
4. भटनागर, डॉ0 ए0बी0ः भारत में शैक्षिक प्रणाली का विकाश, सूर्या पब्लिकेशन, मेरठ, 2006, पृ0 119
5. लाल, प्रो0 मुकुटबिहारीः आचार्य नरेन्द्रदेव–युग और नेतृत्वः आचार्य नरेन्द्रदेव समाजवादी संस्थान, वाराणसी, 1970, पृ0 28
6. श्रीवास्तव, डॉ0 शैलेन्द्रनाथः लोकनायक जयप्रकाश नारायणः प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2002, पृ0 195
7. राय, लाला लाजपतः द प्रॉब्लम ऑफ नेशनल एजुकेशनल इन इण्डियाः प्रकाशन संस्करण, लन्दन, 1920, पृ0 44–47
8. राय, लाला लाजपतः द प्रॉब्लम ऑफ नेशनल एजुकेशनल इन इण्डियाः प्रकाशन संस्करण, लन्दन, 1920, पृ0 171
9. दीक्षित, जगदीश चन्द्रः आचार्य नरेन्द्रदेव–युग और विचारः सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश, 1989, पृ0 35–36
10. दीक्षित, जगदीश चन्द्रः डॉ0 सम्पूर्णानन्दः गोल्ड लाइन प्रिन्टर्स, लखनऊ, 1988, पृ0 6
11. सम्पूर्णानन्द डॉ0ः थॉट्स ऑन एजूकेशन एण्ड सम एलाइड प्रॉबलम्सः सूचना एवं जानकारी विभाग, उ0प्र0 लखनऊ, 1991, पृ0 7
12. भार्गव, डॉ0 विवेक (सम्पादक)ः शिक्षामित्र शोध पत्रिका, वर्ष 4 अंक 1, सितम्बर 2011, आगरा, पृ0 31
13. भार्गव, डॉ0 विवेक (सम्पादक)ः शिक्षामित्र शोध पत्रिका, वर्ष 4 अंक 1, सितम्बर 2011, आगरा, पृ0 31
14. नेहरू, जवाहरलालः स्पीचेज, भाग–5, पृ0 23
15. नेहरू, जवाहरलालः स्पीचेज, भाग–3 पृ0 420–422
16. उद्वतः श्रीशरण, महामानव नेहरू, पृ0 244–245
17. नेहरू, जवाहरलालः स्पीचेज़, भाग–3 पृ0 422–24
18. नेहरू, जवाहरलालः स्पीचेज़, भाग–3 पृ0 21–29
19. नेहरू, जवाहरलालः वाड्मय, खण्ड–7, पृ0 369–370
20. नेहरू, जवाहरलालः वाड्मय, खण्ड–7, पृ0 378।